शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 जून 2017
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

पतंजलि योगदर्शन में वर्णित अष्टांगयोग : एक विवेचन

डॉ.संदीप ठाकरे (योग विभाग)
इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय
अमरकंटक, मध्यप्रदेश, भारत

शोध संक्षेप

योग शास्त्र के मूल प्रणेता हिरण्यगर्भ थे। संभवत: पातंजल योग सूत्र बुद्ध के बाद लिखा गया। यह योग पर सर्वोत्तम ग्रन्थ माना जाता है। पतंजलि सूक्ष्म शास्त्रज्ञ थे। उन्होंने कुल 195 सूत्र लिखे। ये करीब ढाई हजार साल पहले लिखे गए। भारत में इनकी प्रतिष्ठा आज तक चली आ रही है। इससे असंख्य लोगों को मार्गदर्शन मिलता है। योग का सम्बन्ध मन की शक्ति और प्राण शक्ति से है। आत्मा की अनंत शक्ति का ज्ञान प्राप्त करना है तो इन दोनों को वश में करना होता है। यम के पालन से मन शुद्धि और नियम के पालन से प्राण शुद्धि होती है। प्रस्तुत शोध पत्र पतंजलि के योगदर्शन में वर्णित अष्टांगयोग का विवेचन किया गया है।

भूमिका

चित्त की वृत्तियों के निरोध के लिए योगदर्शन में जिस मार्ग का प्रतिपादन किया है उसे अष्टांगयोग के नाम से जाना जाता हैं। चाहे विधायक शब्द पसंद करो चाहे निरोधक पहलू पसंद करो, वैसा किये बिना वह योग प्राप्त नहीं हो सकता। अपने स्वरूप स्थिति को प्राप्त करने का यह विशिष्ट साधन है। इस साधन के आठ अंगों का वर्णन योगदर्शन में किया गया हैं।

योग के ये आठ अंग निम्नलिखित है - यमनियमासन प्राणायाम प्रत्याहार धारणा ध्यानसमाध्यो-ऽष्टावङ्गनि।1

अर्थात यम, नियम, आसन, समाधि, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान समाधि क्रमशः अष्टांगयोग के आठ अंग कहलाते हैं।

योग की पूर्ण साधना के लिए इन आठों अंगों का क्रमशः अभ्यास आवश्यक है। इन आठ अंगों में से प्रथम पांच (यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार) योग के बहिरंग साधन हैं तथा अंतिम तीन (धारणा, ध्यान, समाधि) अन्तरंग साधन कहलाते हैं। इन तीनों को संयुक्त रूप से संयम कहते हैं।2

महर्षि पतंजलि का अष्टांग योग

महर्षि पतंजलि ने अष्टांगयोग के अंगों का वर्णन निम्न प्रकार से किया है -

1 यम : यम अष्टांगयोग का प्रथम अंग हैं जो इस प्रकार है -

अहिंसासत्यास्तेयब्रम्हचर्यापरिग्रह यमा3

अर्थात अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रम्हचर्य, और अपरिग्रह - ये पांच यम बताये गयें हैं।

अहिंसा : यह सर्वप्रथम यम हैं। मनसा, वाचा, कर्मणा किसी प्रकार से भी किसी प्राणी को कष्ट न देना अहिंसा हैं।4

गांधी जी ने सत्य और अहिंसा को ही अपने जीवन का आधार बनाया था। महर्षि पतंजलि अहिंसा का फल बताते हुए स्पष्ट करते हैं कि - अहिंसा प्रतिष्टायां तत्सन्निद्यौ वैरत्यागः।5

अर्थात योगी का अहिंसा भाव पूर्णतया दृढ़ स्थिर हो जाता हैं तब उनके निकटवर्ती हिंसक जीव भी वैरभाव से रहित हो जाता है।

सत्य : मन, वचन अथवा कर्म से वस्तु के यथार्थ रूप की अभिव्यक्ति ही सत्य है।6 सत्य के माध्यम से ही हम अपनी वाणी को संयमित और पवित्र बना सकते हैं। महर्षि पतंजलि सत्य का फल बताते हुए स्पष्ट करते हैं कि -

सत्यप्रतिष्ठायानां क्रियाफलाश्रयत्वम्।7

अर्थात जब योगी सत्य का पालन करने में पूर्णतया परिपक्व हो जाता है, उसमें किसी प्रकार की कमी नहीं रहती, उस समय वह योग कर्तव्यपालनरूप क्रियाओं के फल का आश्रय बन जाता है। सत्य बोले, प्रिय बोलें, अप्रिय सत्य न बोलें तथा प्रिय असत्य न बोलें यह सनातन धर्म हैं।8

अस्तेय : बिना पूछे तथा बिना अनुमति के दूसरे के किसी भी द्रव्य को लेने की इच्छा का परित्याग कर देना ही अस्तेय है।9 किसी के धन या द्रव्यादि को शास्त्रविरूध्द उपाय से ग्रहण कर लेना स्तेय (चोरी) है और ऐसा न करना अस्तेय है।10

महर्षि पतंजलि अस्तेय का फल बताते हुए स्पष्ट करते हैं कि -

अस्तेयप्रतिष्ठायां सर्वरत्नोपस्थानम् ।11 अर्थात जब साधक में चोरी का अभाव पूर्णतया प्रतिष्ठित हो जाता हैं तब पृथ्वी में जहां कहीं भी गुप्त स्थान में पडे हुए समस्त रत्न उनके सामने प्रकट हो जाते हैं अर्थात उनकी जानकारी में आ जाते हैं।

ब्रह्मचर्य : मन, वाणी तथा शरीर से होने वाले सब प्रकार के मैथुनों का परित्याग कर देना ब्रह्मचर्य हैं।12 ब्रह्मचर्य के विषय में अथर्ववेद में कहा गया है -

ब्राह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाध्नता ।13 अर्थात् ब्रह्मचर्य के अभाव से ही देवों ने मृत्यु पर विजय प्राप्त कर लिया था। महर्षि पतंजलि ब्रह्मचर्य का फल स्पष्ट करते हैं -

ब्रह्मचर्यप्रतिष्ठायां वीर्यलाभः।14

अर्थात जब साधक के मन में ब्रह्मचर्य की पूर्णतया दृढ स्थिति हो जाती है, तब उसके मन, बुद्धि, इन्द्रिय और शरीर में अपूर्व शक्ति का प्रादुर्भाव हो जाता हैं।

अपरिग्रह : स्वार्थवश आसक्तिपूर्वक धन सम्पत्तियों का संचय करना परिग्रह है। और ऐसा न करना अपरिग्रह है।15

महर्षि पतंजलि अपरिग्रह का फल बताते हुए स्पष्ट करते हैं -

अपरिग्रहस्थैर्यै जन्मकथन्तासंबोधः16

अर्थात् अपरिग्रह की दृढ़ प्रतिष्ठा हो जाने पर योगी को पूर्वजन्म और वर्तमान जन्म की सब बातों का ज्ञान हो जाता हैं।

2 नियम : नियम अष्टांगयोग का द्वितीय अंग हैं।

शौच संतोष तपः स्वाध्यायेश्वरप्राणिधानानि नियमाः।17

अर्थात शौच, संतोष, तप, स्वास्थय और ईश्वर प्रणिधान ये पांच नियम हैं।

शौच : शौच का तात्पर्य है जीवन के शारीरिक, मानसिक, क्रियाकलाप के प्रत्येक क्षेत्र में शुद्धता का अभ्यास कराना 18 शौच के फल के विषय में योगदर्शन में कहा शौचात्स्वाड.जुगुप्सा परैरसंसर्गः।19

अर्थात शौच के पालन से अपने अंगों में वैराग्य तथा दूसरो से संसर्ग न करने की इच्छा उत्पन्न होती है।

संतोष : प्रारब्धानुसार तथा अपनी शक्ति के अनुसार प्रयत्न करने पर प्राप्त फल अथावा अवस्था में मस्त तथा प्रसन्नचित रहना तथा उससे अधिक की लालसा न करना ही संतोष हैं।

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 जून 2017
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

20 संतोष के फल के विषय में योगदर्शन में कहा गया है -

संतोषादनुत्तम सुखलाभ:। 21

अर्थात संतोष से उत्तम दूसरा कोई सुख नहीं हैं ऐसे सर्वोत्तम सुख का लाभ होता हैं।

तप: : सब प्रकार के द्वंद्वों को सहन करना तप कहलाता है। 22 तप का फल बताते हुए योगदर्शन में कहा गया है -

कायेन्द्रियसिध्दिरशुद्धिक्षयात्तपसः।23

अर्थात तप के प्रभाव से जब अशुद्धि का नाश हो जाता है तब शरीर और इन्द्रियों की सिद्धि हो जाती है।

स्वाध्याय : स्वाध्याय अर्थात आत्म अध्ययन। यह अपनी जीवन दशा का उचित मूल्यांकन एवं जीवन की सही दिशा निर्धारण है।24 स्वाध्याय की फल बताते हुए योगशास्त्र में कहा गया है -

स्वाध्यायदिष्टदेवता सम्प्रयोगः।25

अर्थात स्वाध्याय से इष्ट देवता का भलिभांति साक्षात्कार हो जाता है।

ईश्वर प्राणिधान : ईश्वर की उपासना या भक्ति विशेष को ईश्वर प्राणिधान कहते हैं। सम्पूर्ण कर्मफलों के सहित समस्त कर्मो को परमगुरू परमेश्वर के निमित्त अर्पित करना ईश्वर प्राणिधान हैं। 26 ईश्वर प्राणिधान का फल बताते हुए योगदर्शन में कहा गया हैं -

समाधिसिद्धिरीश्वर प्राणिधानात्। 27

अर्थात ईश्वर प्राणिधान से समाधि की सिद्धि हो जाती हैं।

3 आसन

स्थिरंसुखमासनम्।28 अर्थात निश्चल सुख पूर्वक बैठने का नाम आसन है। हठयोग में आसनों के बहुत भेद बताये गये हैं। आसनों का अभ्यास मनुष्य के शारीरिक एवं मानसिक तथा व्याधि निवारण हेतु बताया गया है।

4 प्राणायाम

तस्मिन् सति श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेदः प्राणायाम:।29

अर्थात प्राणवायु की गमनागमन रूप क्रिया का बंद हो जाना ही प्राणायाम हैं।

5 प्रत्याहार

स्वविषयासम्प्रयोगे चित्तस्वरूपानुकार इवेन्द्रियाणां प्रत्याहारः।30

अर्थात अपने विषयों के सम्बंध से रहित होने पर इन्द्रियों का जो चित्त स्वरूप में तदाकार-सा हो जाना ही प्रत्याहार हैं। प्रत्याहार का फल बताते हुए योगदर्शन में स्पष्ट किया गया है कि -

ततः परमा वश्यतेन्द्रियाणाम् ।31

अर्थात प्रत्याहार सिद्ध हो जाने पर योगी की इन्द्रिया उसके सर्वथा वश में हो जाती हैं।

6 धारणा

देशबंधश्चित्तस्य धारणा। 32

अर्थात बाहर या शरीर के भीतर कहीं भी किसी एक देश में चित्त को ठहराना धारणा है। वस्तुतः यह एक प्रकार का मानसिक व्यायाम है, जो साधक को आगे ध्यान तथा समाधि के अभ्यास में समर्थ बनाता हैं।

7 ध्यान

तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम्। 33

अर्थात जहां चित्त को लगाया जाय उसी में वृत्ति का लगातार चलना ध्यान है।

8 समाधि

तदेवार्थभात्रनिर्भासं स्वरूपशून्यमिव समाधि:। 34

अर्थात जब ध्यान में केवल ध्येयमात्र की ही प्रतीत होती है और चित्त का निज स्वरूप शून्य हो जाता हैं। तब वहीं (ध्यान) ही समाधि हो जाता है। यह योग शास्त्र में वर्णित सर्वोच्च अवस्था है।

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 जून 2017
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

निष्कर्ष

शिक्षा शास्त्र में पातंजल योग सूत्र शिरोमणी ग्रन्थ है। इसमें मानस और अतिमानस दोनों दृष्टियों से विचार किया गया है। योग सूत्र ने अपना मुख्य विषय चित्त वृत्ति निरोध माना है। योग शब्द में कुछ जोड़ना है, प्राप्त करना है। चित्त वृत्ति निरोध में तोड़ना है। अपने से चिपकी हुई व्यर्थ कल्पनाएँ,. व्यर्थ चीजें तोड़नी है। आवरण को तोड़ना है। इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन में पतंजलि योगदर्शन में वर्णित अष्टांग योग का स्वरुप स्पष्ट होता है। अतः अष्टांगयोग योगसाधन हेतु महत्वपूर्ण एवं व्यावहारिक विधि हैं।

संदर्भ ग्रन्थ

1 पतंजलि योगदर्शन 2/ 29
2 पतंजलि योगदर्शन 3/4
3 पतंजलि योगदर्शन 2/30
4 आत्रेय शान्तिप्रकाश (1965), योग मनोविज्ञान, श्रीराम शंकर तारा पब्लिकेशन, काशी पृष्ठ 165
5 पतंजलि योगदर्शन- 2/35
6 आत्रेय शान्तिप्रकाश (1965), योग- मनोविज्ञान, श्रीराम शंकर तारा पब्लिकेशन, काशी पृष्ठ 173
7 पतंजलि योगदर्शन - 2/36
8 मनुस्मृति 4/138
9 स्वामी विज्ञानानंद सरस्वती (1998) योग विज्ञान योग निकेतन ट्रस्ट, ऋषिकेश, पृष्ठ 44
10 योग व्यासभाष्य 2/30
11 पतंजलि योगदर्शन 2/37
12 स्वामी विज्ञानानंद सरस्वती (1998) योग विज्ञान योग निकेतन ट्रस्ट, ऋषिकेश, पृष्ठ 45
13 अर्थववेद 1/5/19
14 पतंजलि योगदर्शन 2/38
15 स्वामी विज्ञानानंद सरस्वती (1998), योगविज्ञान, योग निकेतन ट्रस्ट, ऋषिकेश, पृष्ठ 50
16 पतंजलि योगदर्शन 2/39
17 पतंजलि योगदर्शन 2/32
18 योगसूत्र का परिचयात्मक अध्ययन (2002) संपादक मानव चेतना एवं योगविज्ञान संकाय, देवसंस्कृति विश्वविद्यालय हरिद्वार , पृष्ठ 93
19 पतंजलि योगदर्शन 2/40
20 आत्रेय शान्तिप्रकाश (1965), योग- मनोविज्ञान, श्रीराम शंकर तारा पब्लिकेशन, काशी, पृष्ठ 185
21 पतंजलि योगदर्शन 2/42
22 स्वामी विज्ञानानंद सरस्वती (1998), योगविज्ञान योग निकेतन ट्रस्ट ऋषिकेश, पृष्ठ 57
23 पतंजलि योगदर्शन 2/43
24 श्रीवास्तव सुरेश चन्द्र (2008), पतंजलि योगदर्शन, चौखम्बा सुभारती प्रकाशन, वाराणसी, पृष्ठ 45
25 पतंजलि योगदर्शन 2/44
26 श्रीवास्तव सुरेश चन्द्र (2008), पतंजलि योगदर्शन, चौखम्बा सुभारती प्रकाशन, वाराणसी, पृष्ठ 47
27 पतंजलि योगदर्शन 2/45
28 पतंजलि योगदर्शन 2/46
29 पतंजलि योगदर्शन 2/49
30 पतंजलि योगदर्शन 2/30
31 पतंजलि योगदर्शन 2/55
32 पतंजलि योगदर्शन 3/1
33 पतंजलि योगदर्शन 3/2
34 पतंजलि योगदर्शन